# धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा : चारित्रिक संकट से मुक्ति

– डा० (श्रीमती) हेमलता तलेसरा
विद्याभवन जी० एस० शिक्षक महाविद्यालय, उदयपुर

वर्तमान समय में जहाँ मानव ज्ञान, विज्ञान, तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी की दृष्टि से निरन्तर विकास की ओर अग्रसर होता जा रहा है; नैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से पतन की ओर बढ़ रहा है। व्यक्ति के भौतिकवादी बनने के साथ-साथ भ्रष्टाचार, हिंसा, बेईमानी, संकुचितता तथा अनुशासनहीनता ने समाज में अपनी जड़ें अत्यधिक गहरी बना ली हैं। जीवन की समस्याएँ बढ़ रही हैं। नई पीढ़ी धार्मिक और नैतिक बातों को मिथ्या आडम्बर मात्र समझती है। धर्म के तत्त्वज्ञान, ज्ञानशास्त्र और नीतिशास्त्र के प्रति अज्ञानता विकसित हो रही है। आज नैतिकता मात्र चर्चा का विषय बन गयी है। आचरण इस पर सबसे कम किया जा रहा है।

एक प्रसिद्ध दार्शनिक के अनुसार आज मनुष्य समुद्र में मछली की तरह तैर सकता है, आकाश में पक्षियों की तरह उड़ सकता है, परन्तु वह यह नहीं जानता कि पृथ्वी पर मनुष्य की तरह किस प्रकार चले? आज वह मनुष्य का मूल गुण भूल गया है। इसके पीछे मानसिक तनाव तथा अशान्ति का हाथ है। आज व्यक्ति को सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों से जोड़ने हेतु धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा की आवश्यकता निरन्तर बढ़ रही है।

**धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा क्या है?**

धर्म एक प्रकार के कर्तव्य के द्वारा कुछ उपयोगी तथा आत्म-उपयोगी गुणों को धारण करना है। मानव धर्म के अंग के रूप में व्यक्ति का कर्तव्य आत्मा, परमात्मा और संसार के प्रति होता है। प्रसिद्ध दार्शनिक सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार धर्म एक प्रकार की भावनात्मक तथा ऐच्छिक प्रतिक्रिया है। पश्चिमी शिक्षाशास्त्री रॉस के अनुसार धर्म व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में सत्यं शिवं सुन्दरम् की प्राप्ति में सहायक एक शक्ति है। बाइबिल में दीन दुखियों की सेवा को ही धर्म बताया गया है।

नैतिकता आचरण में लक्षित होती है। सद्-असद् विवेक इसके अन्तर्गत आता है। नैतिक जागृति से व्यक्ति का समुचित विकास होकर समाज में शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की स्थापना होती है। नैतिक बल, भावनाएँ एवं तर्क-संगति के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व का निर्माण होता है और उसी के अनुपात में व्यक्ति का समाज में प्रभाव होता है। उसी के साथ-साथ नैतिक बल का निर्माण भी होता चला जाता है।

धर्म नैतिकता की पूर्व आवश्यकता है। यदि धर्म कारण है तो



साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैतिकता परिणाम। यदि विश्व के धर्मों की तुलना करें तो पता चलेगा कि उनमें तत्वज्ञान, ज्ञानशास्त्र और कर्मकाण्ड में भिन्नता हो सकती है पर नीतिशास्त्र सभी में लगभग एक जैसा है। नैतिक आचरण के पीछे धर्म को स्वीकृति की आस्था उठ जाने से समाज लड़खड़ा जायेगा---न कहीं सत्य होगा, न सदाचार, न ईमानदारी और न अहिंसा ही।

धार्मिक तथा नैतिक सम्प्रत्यय के आधार पर धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा का अभिप्राय ऐसी शिक्षा से है, जिसमें विद्यार्थियों को सद् तथा असद् में अन्तर करके विवेकसम्मत निर्णय लेने और सदाचार का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (१९८६) के अनुसार बच्चों का नैतिक एवं चारित्रिक विकास नैतिक शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है। शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों को ज्ञान एवं कुशलता प्रदान करने के साथ-साथ उनमें ऐसे मानवीय गुणों जैसे---प्रेम, सेवा, सहानुभूति, सत्य, सहयोग, संयम, सहिष्णुता, कर्तव्यपरायणता, अहिंसा, देशभक्ति आदि का विकास करना है, जिससे वे एक आदर्श सदाचारी नागरिक बन सकें। नैतिक शिक्षा के अन्तर्गत शारीरिक शिक्षा, मानसिक स्वस्थ चरित्र, आचरण, उचित व्यवहार, शिष्टाचार, सामाजिक अधिकार, कर्तव्य तथा धर्म आदि सम्मिलित होते हैं। यह वास्तव में उचित मनोभावों, भावनाओं एवं संवेगों को विकसित करने की पद्धति है।

समाज में शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए नैतिक मूल्यों का विकास किया गया है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, बाईबिल, कुरान आदि महान ग्रन्थों में धर्म और दर्शन के साथ-साथ श्रेष्ठ नैतिक मूल्यों का संग्रह है। महावीर, गौतम बुद्ध, ईसामसीह, मुहम्मद, जरथुस्त, बाल्मीकि, व्यास, तुलसीदास, कबीर, इकबाल, टैगोर, अशोक, हर्षवर्धन, अकबर, दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, बालगंगाधर तिलक, अरविंद घोष और गाँधी आदि ने बालक के जीवन में नैतिक विकास करने वाली शिक्षा पर अधिक बल दिया था।

### ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारतवर्ष में अति प्राचीनकाल से ही धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा को महत्त्व दिया जाता रहा है। वैदिककाल में ईश्वर-भक्ति तथा धार्मिकता की भावना भरना व पवित्र चरित्र-निर्माण शिक्षा के मुख्य लक्ष्य माने जाते थे। जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति था, जिसमें धर्म को सबसे महत्त्वपूर्ण माना गया। प्राचीन विद्यालयों का वातावरण धार्मिक कार्यों जैसे यज्ञ, संध्या, प्रार्थना, संस्कार व धार्मिक उत्सवों से परिपूर्ण रहता था। उस समय के समाज का लक्ष्य उच्च नैतिक जीवन व्यतीत करना था, यही शिक्षा का ध्येय भी था। मध्यकाल में शिक्षा के लिए मन्दिर, मस्जिद तथा धार्मिक स्थानों का प्रयोग किया जाता था। यूरोपीय ईसाई मिशनरी ने धर्म प्रचार हेतु विद्यालयों में धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा की व्यवस्था की। १८५४ के वुड घोषणा-पत्र में शिक्षा में धर्मनिरपेक्ष स्वरूप तथा नैतिक विचारधारा की पुष्टि की गई। १८८२ के भारतीय शिक्षा आयोग (हन्टर कमीशन) ने पाठ्यक्रम में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं रखा। १९१७-१८ के कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग ने शिक्षा के धार्मिक एवं नैतिकरूप को झगड़े की वस्तु मानकर कोई विचार नहीं किया। १९३७-३८ की गाँधी जी की बेसिक शिक्षा योजना में 'सत्य' को धार्मिक शिक्षा का अग बनाया गया। १९४४-४६ में बिशप जी. डी. बार्न समिति ने धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा की आवश्यकता तो अनुभव की किन्तु इसका दायित्व घर तथा समुदाय तक ही रखा।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद बने पहले शिक्षा आयोग (१९४८-४९) ने विद्यालयों में धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा को विभिन्न कार्यक्रमों में सम्मिलित किये जाने पर बल दिया। १९५२-५३ के माध्यमिक


Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षा आयोग ने चरित्र की शिक्षा पर बल दिया तथा घर, विद्यालय एवं समाज की नैतिकता आचरण के प्रति आस्था को चरित्र-निर्माण के लिए महत्वपूर्ण बताते हुए शिक्षक एवं विद्यालयीन जीवन को समृद्ध किए जाने की सिफारिश की। १९५८-५९ में नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता एवं सम्भावनाओं पर विचार हेतु श्रीप्रकाश समिति का गठन किया गया। इस समिति ने विद्यालयों में नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का शिक्षण वांछनीय माना तथा विद्यालयों का कार्यक्रम मौन प्रार्थना से शुरू करने का सुझाव दिया। १९६२ की भावात्मक एकता समिति ने भी राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में चरित्र-निर्माण को महत्वपूर्ण बताते हुए धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। १९६४-६६ के कोठारी शिक्षा आयोग ने नई पीढ़ी में मूल्यहीनता पर चिन्ता व्यक्त की तथा शिक्षा में नैतिक, आध्यात्मिक एवं सौन्दर्यात्मक मूल्यों के विकास को अत्यधिक महत्वपूर्ण माना। विभिन्न आयोगों के अतिरिक्त शिक्षा की राष्ट्रीय, राज्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बनी समितियों ने एकमत से मूल्य संकट तथा चारित्रिक संकट से देश को बचाने हेतु नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा को किसी न किसी रूप में विद्यालयीन कार्यक्रम के साथ जोड़ना अत्यधिक आवश्यक बताया है। लेकिन दुर्भाग्य से शिक्षा जगत् में किये जाने वाले अब तक के अनेक प्रयास तथा योजनाएँ हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने में सफल नहीं हो पायी हैं। शिक्षा की इस गम्भीर स्थिति को ध्यान में रखते हुए ही देश में एक नई शिक्षा नीति १९८६ में लागू की गयी है, जो राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता को बनाए रखकर राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके और भारतीय संविधान के संकल्पों के अनुसार नई पीढ़ी को प्रतियोगिता के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर आत्मविश्वास के साथ खड़ी करने में समर्थ कर सके। इसके लिए अपने कर्तव्यों के प्रति उन्मुख नागरिकों की आवश्यकता है, जो नैतिकोन्मुखी हो। यही कारण है कि नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत नैतिक मूल्यों के शिक्षण तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था पर बल दिया गया है। जिससे राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने हेतु एक नया प्रकाश प्राप्त हो सके।

**राष्ट्रीय समस्याओं के हल हेतु महत्वपूर्ण नैतिक मूल्यों का शिक्षा में समावेश हो—**

देशवासियों में एकता की भावना विकसित करने हेतु शिक्षा में सार्वजनीन तथा शाश्वत मूल्यों का विकास करना होगा जिनसे धार्मिक अन्धविश्वास, कट्टरता, असहिष्णुता, हिंसा तथा भाग्यवाद का अन्त किया जा सके और विद्यार्थियों में राष्ट्रीय एकता का दृष्टिकोण विकसित किया जा सके। छात्रों को एक-एक क्षण का सदुपयोग करना सिखाने के लिए विद्यालयों में विभिन्न पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं जैसे स्काउटिंग, एन० एस० एस०, एन० सी० सी०, खेलकूद आदि का आयोजन रखा जाये। विद्यालयों में साम्प्रदायिक संकीर्णता नहीं आने देने के लिए साम्प्रदायिकता की शिक्षा न देकर आध्यात्मिक व धार्मिक मूल्यों की शिक्षा पर बल दिया जाना चाहिए। छात्रों को सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से परिचित कराकर उन्हें इस योग्य बनाया जाय कि वे अपने विचार तथा व्यवहार में उदार बन सकें, भाषा, सम्प्रदाय, जाति, लिंग पर आधारित पूर्वाग्रह से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हितों की बात सोच सकें। इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालय ही नहीं बल्कि घर का वातावरण ऐसा सरस व सुन्दर बनाया जाए कि नैतिक मूल्यों का विकास हर सदस्य अपना सामूहिक उत्तरदायित्व समझे। विद्यालयी शैक्षिक तथा सहशैक्षिक कार्यक्रमों में सभी धर्मों के त्यौहारों को समान रूप से मनाना, महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा देने हेतु विचार गोष्ठी रखना, वादविवाद आयोजित करवाना तथा सामाजिक सेवा कार्यक्रमों को आवश्यक रूप से जोड़ा जाना चाहिए।



साध्वीरत्न कुसुमवती अभिनन्दन ग्रन्थ
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षा द्वारा छात्रों में आत्म-सम्मान की भावना का विकास कर उन्हें आध्यात्मिक/धार्मिक दिशा हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए। सभी धर्मों के प्रति सहिष्णुता तथा समान आदर भाव रखने हेतु छात्रों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। छात्रों के सामने ऐसी समस्याएँ प्रस्तुत की जाएँ, जिनसे वे सद्-असद् में अन्तर करना सीख सकें। चूंकि अनुकरण का बालकों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है, इसलिए अध्यापकों तथा माता-पिता को स्वयं नैतिक नियन्त्रण के अन्तर्गत ही रहने का प्रयास करना चाहिए। यदि अध्यापक तथा पिता खुलेआम धूम्रपान करता है तो छात्रों को उस कार्य से कैसे रोक सकेगा ? और ऐसा करने से छात्रों पर नकारात्मक प्रभाव ही पड़ेगा 'Action speaks louder than tongue.' यह बात निर्विवाद सत्य है।

विद्यालय में तथा माता-पिता की ओर से बालकों में नई शिक्षा नीति द्वारा दिये गये 'राष्ट्रीय पंचशील' के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप दिया जाना अत्यधिक आवश्यक है। इन सिद्धान्तों से सम्बन्धित मूल्य स्वच्छता, सत्यता, परिश्रम, समानता और सहयोग है।

महाभारत में नैतिक शिक्षा के स्वरूप का संकेत स्पष्ट है—'महाजनो येन गतः स पन्था'। बालकों को महापुरुषों के चारित्र्य का अनुसरण करना सिखाया जाए, न कि चरित्र का। आज तक शिक्षा में विभिन्न पाठ्यक्रमों द्वारा मात्र चरित्र का ही अनुसरण करने का मन्तव्य स्पष्ट होता है, जबकि महापुरुषों के जीवन से मरने तक का इतिहास इतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना उनके जीवन के प्रेरणास्पद, चरित्र-निर्माणकारी और लक्ष्यबोधक पावन प्रसंगों का समावेश। नैतिक शिक्षण में यदि यह कहा जाए 'सत्य बोलो, मिलकर रहो' तो कभी भी सही प्रभाव नहीं दिखाई देगा अतः आवश्यक है कि जो कुछ भी कहा जाये साहित्यिक मन्तव्य "कान्तासम्मित उपदेश युजे" अवश्य हो किन्तु श्रोता अनुभव न कर सकें कि उन्हें उपदेश देने का प्रयास किया जा रहा है।

भगवान् महावीर ने नैतिक जागरण के लिए बौद्धिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन परिमार्जित करने पर बल दिया था जिससे अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त के माध्यम से युद्ध, शोषण तथा तनाव को समाप्त किया जा सके, शान्ति, समानता और सह-अस्तित्व के वातावरण से मानव-कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो सके। महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने विद्यार्थियों के लिए एक आचार संहिता को अनिवार्य माना है।

**भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था विकसित की जाए**

यदि हम अपने अतीत की ओर मुड़कर देखें तो पायेंगे कि जिस भारतीय संस्कृति के गरिमामय रूप पर हम आज भी गौरवान्वित अनुभव करते हैं वह क्या था ? और आज इससे हटकर हिंसा, तोड़-फोड़, आन्दोलन, घेराव, भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, अनैतिकता, मूल्यहीनता तथा दिशाहीनता की स्थिति में हम क्यों फँसे जा रहे हैं ? प्राचीन भारतीय संस्कृति सदैव धार्मिक—नैतिक चेतना से अनुप्राणित रही है। मनुष्य में सात्त्विक वृत्तियों को जाग्रत करके रजस-प्रभुत्व द्वारा कामनाओं तथा तृष्णाओं को नियन्त्रित कर तमस्—अज्ञानांधकार का उन्मूलन कर उसे ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ बनाती थी, समन्वय की ओर अग्रसर करती थी, विजातीय संस्कृतियों को आत्मसात करना सिखाती थी।

सैद्धान्तिक दृष्टि से अपनी महान् सांस्कृतिक परम्पराओं को लेकर चलने पर भी हम संस्कृति से निरन्तर पिछड़ते गये और न तो सांस्कृतिक विरासत का विकास ही कर पाए तथा न ही नवीन जीवन मूल्य आयाम समाज को दे पाये। इसी कारण जीवन में भटकाव, बिखराव, स्खलन ही अधिक हुआ है। आज हम आदर्शप्रधान संस्कृति को भूलकर अर्थप्रधान संस्कृति को अपना चुके हैं।


Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी कारण भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों, परम्पराओं का विघटन ही हुआ है। अनुकरण के नाम पर गुणों, आदर्शों, मूल्यों के नाम पर कुत्सित, अनैतिक जैसी चीज को अपना रहे हैं। यही कारण है कि मानवीय गुणों के विपरीत आज अपराधों में वृद्धि हुई है। मूल्यों, व्यवहारों आदि को बदलते रहने के कारण व्यक्ति का 'स्तत्व' 'अपनापन' खो गया है। वह तय नहीं कर पाता है कि पिता का सेल्स-टेक्स, इन्कम टेक्स बचाने वाला, मिलावट का धन कमाने वाला रूप सही है या घर-समाज में ईमानदारी तथा कर्तव्यपरायणता की डुगडुगी पीटने वाला रूप ?

युवा-शक्ति एवं मूल्य संक्रमण की समस्या आज हमारे समक्ष एक चुनौती बनकर खड़ी है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक, शिक्षार्थी, अभिभावक, नेता, समाज-सुधारक, अधिकारी आदि सभी लोग अपने दायित्व को समझें, आदर्श प्रस्तुत करें, सुदृढ़ चरित्र रखें, ज्ञान कर्म तथा भावना से नैतिक आचरण करें। शिक्षा संस्थाएँ शिक्षा के पाठ्यक्रम, पाठ्य-चर्चा, पाठय-विषयों एवं पाठ्य-क्रमोत्तर क्रियाओं द्वारा विद्यालय के वातावरण को सहज सौहार्दपूर्ण बनायें। मात्र परीक्षा उत्तीर्ण करना ही अपना उद्देश्य नहीं बनाएँ वरन् छात्रों को मानव तथा निष्ठावान नागरिक बनाने में मदद करें। उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक व्यवस्था का व्यावहारिक ज्ञान देकर समाज के अनुरूप तैयार करें।

विद्यालयों के अतिरिक्त समाज के अन्य अभिकरण, सभी वर्ग भी पूर्ण ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठता का उदाहरण प्रस्तुत करें। समाज में अपनी-अपनी भूमिका सही रूप में निभाएँ तभी समाज में नैतिक आध्यात्मिक एवं मानवीय गुणों की महक सुवासित होगी। ऐसा वातावरण निर्मित किए जाने पर बल दिया जाए जिससे मूल्यहीनता, दिशाहीनता, कूप-मण्डूकता से बाहर निकला जा सके। नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के विकास हेतु हर वर्ग यदि सहयोग करेगा तभी आतंकित एवं त्रस्त मानवता को मुक्ति मिल सकेगी।

□

□————————————□

**पियंकरे पियंवाई से सिक्खं लद्धु गरिहइ।**

**—उत्तरा. ११/१४**

वही शिष्य अथवा शिक्षा प्राप्ति के लिए समुत्सुक, उद्योगी अपनी अभीष्ट शिक्षा (विद्या अथवा कला) को सीख सकता है, जो प्रिय वचन बोलता है और अन्य लोगों (विशेष रूप से शिक्षक, सहपाठी, मित्र जन, माता-पिता, बन्धु बान्धवों) को प्रिय लगने वाले कार्य करता है।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org